अग्निदेव की स्तुति *

प्रो.प्रद्युम्न कृष्ण काव
(निदेशक, प्लाज़्मा अनुसंधान संस्थान)

मनुष्य सदैव ऊर्जा के नवीन स्रोत के खोज में प्रयत्नशील रहा है। इसकी वजह है मनुष्य के अपरिमित सपने, जो खुद छोटा एवं सामान्य सा जीव होने के बावजूद वह देखता है। उसकी शारीरिक क्षमताएँ सीमित है, पर सपने और आकाक्षाएं बेहद ऊँचे । वह पर्वतों को हिलाना चाहता है, नदियों के प्रवाह को मोड़ना चाहता है, सितारों के पास उड़ जाना चाहता है, और भी न जाने क्या कुछ करना चाहता है। इन सपनों को साकार करने के लिए उसे एक दास की आवश्यकता है... एक जिन्न की; जो किसी चमत्कारिक बोतल को खोलते ही बाहर आकर उसकी इच्छाओं को पूरा कर दे। ऊर्जा एक इसी प्रकार का दास है, पर मनुष्य को वह कभी पूरा नहीं पड़ता। यह लेख मनुष्य जाति द्वारा ऊर्जा के नए स्रोतो की खोज के संक्षिप्त इतिहास को समर्पित है। हम देखेंगे की इस संधान में मनुष्य जाति का सामना अग्नि के विभिन्न स्वरूपों से होता आया है। चाहे भविष्य में उपभोग के लिए ईंधन में ऊर्जा का संचय होना हो या ईंधन के उपभोग से ऊर्जा उत्पन्न करना हो ... दोनो ही परिस्थितिओं में अग्नि के विभिन्न स्वरूप मानों बोतल से चमत्कारिक जिन्न को निकालने में मददगार होते हैं। यह पूरा इतिहास हमें अग्नि एवं उसके विभिन्न स्वरूपों के प्रति अचम्भित करता है, एवं श्रद्धा की ऐसी भावना उमड़ती है कि अपने पूर्वजों का अनुगमन करते हुए हम भी स्वतः अग्निदेव के स्तुतिगान में निर्मग्न हो उठते है। इसलिए इस लेख का शीर्षक अग्निदेव की स्तुति रखा गया है।

आँकडो की बात की जाए तब एक आधुनिक मनुष्य को आराम एवं प्रतिष्ठायुक्त जिंदगी जीने के लिए एक न्यूनतम मात्रा की ऊर्जा अवश्य चाहिए। दरअसल, किसी भी देश में प्रति व्यक्ति बिजली की खपत, मानवीय विकास सूचकांक (जो कि जन्म के समय प्रत्याशित आयु द्वारा निर्धारित होती है) का अच्छा मापदण्ड माना जा सकता है। (चित्र 1) । इस दृष्टि से हालाँकि भारतवर्ष आजादी के पश्चात लगातार धीमी गति से प्रगतिशील है परन्तु फिर भी उसे युरोप तथा जापान जैसे विकसित देशो की तुलना में आने के लिए काफी आगे बढ़ना पड़ेगा। चित्र (1) में दुनिया के विभिन्न भागो में प्रति व्यक्ति बिजली की खपत की तुलना की गई है। भारत जैसा प्रगतिशील देश आज भी विश्व औसत का 1/5वाँ, विकसित देशों के औसत का 1/17वाँ तथा उत्तरी अमरीका में बिजली की खपत का 1/50वाँ हिस्सा ही खर्च कर रहा है। जैसे अधिकाधिक देश मानवीय विकास सूचकाँक में आगे की और अग्रसर होते रहेगें, विश्व में ऊर्जा की खपत काफी बढ़ेगी। इसलिए यह आवश्यक है कि ऊर्जा के नये स्रोतो की खोज जारी ही नही रहे अपितु प्रत्येक वर्ष इस खोज में बढ़ोतरी होती रहे।

जैसा कि हमने पहले चर्चा की है, एक आरामदायक जिन्दगी के लिए (जिसमें ऊर्जा द्वारा खाना पकाने, आवागमन, बिजली, पानी, तापमान नियंत्रण की सुविधाएँ आसानी से मुहैया हों) विकसित देशों में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष 6000 KWH ऊर्जा की खपत है। यह लगभग 17 KWH (बिजली के 17 यूनिट) प्रति दिन की खपत के बराबर है। भारतवर्ष में मात्र 1 KWH ऊर्जा प्रति व्यक्ति प्रति दिन के हिसाब से उपलब्ध है। एक KWH ऊर्जा, एक सौ वॉट के बल्ब के लगातार दस घंटे तक जलने में या फिर एक औसतन तापमान नियंत्रक

*कुमारी एल ए मीरा मेमोरियल ट्रस्ट, पालघाट, केरल द्वारा 2003 में प्रकाशित प्रो. काव की मूल रचना Hymn to Agni the God of Fire का हिन्दी अनुवाद डॉ. अनिता दास ने किया।

(A.C.) के आधे घंटे के इस्तेमाल में व्यय होती है। तुलनात्मक दृष्टि से यह लगभग सौ किलोग्राम वजन की दो हजार बोरियों को जमीन से दो मीटर की ऊँचाई तक उठाने में खर्च होती है। यह लगभग उतनी ऊर्जा है जितनी 6 आदमी दस से बारह घंटे लगातार श्रम करने पर इस्तेमाल में लाते है। जाहिर है सुविधाओं से परिपूर्ण जिन्दगी आसानी से नहीं मिल सकती। एक विकसित देश में ऊर्जा की खपत की मात्रा ऐसी है मानो प्रत्येक व्यक्ति पूरे समय के लिए सौ मानवीय दासों के श्रम का उपभोग कर रहा हो।

यह परिपेक्ष्य हमें जीवों के माँशपेशियों में निहित ऊर्जा की चर्चा की ओर प्रेरित करता है। मानव जाति ने सर्वप्रथम ऊर्जा के इसी स्रोत को उपयोग में लाया। पहले अपनी, फिर जानवरों एवं दासों के शारीरिक श्रम का खूब उपयोग किया गया । ईजिप्ट के पिरामिडो का निर्माण, रोम के Galley जहाजो द्वारा युरोपीय देशों पर आक्रमण एवं नियंत्रण, इन सभी में जानवरों एवं दासो की शारीरिक ऊर्जा का ही इस्तेमाल किया गया। अपने निकट आज भी हम घोड़ों, बैलों तथा ऊटों का इस्तेमाल गाड़ियों को खींचने, खेत जोतने एवं बीजों से तेल निकालने में किया जाता हुआ देख सकते है। स्त्री एवं पुरुषो को भी शारीरिक श्रम के विभिन्न कार्यो में निर्मग्न देखा जा सकता है। परन्तु आधुनिक युग की आवश्यकताएं मात्र शारीरिक श्रम से पूरी नही हो सकती। आइए, अब हम इस तर्क को भलिभाँति समझने की कोशिश करते हैं।

मानवीय श्रम में उपयुक्त ऊर्जा का मूल स्त्रोत भोजन है। औसतन प्रत्येक व्यक्ति प्रति दिन 2500 कैलोरी जो कि 3 KWH ऊर्जा के बराबर है, को अपने भोजन से प्राप्त करता है। इसमें से अधिकांश ऊर्जा मात्र जीवित रहने अर्थात् अपने शरीर को गर्म रखने (क्या आपको पता है कि हम सभी जाग्रत अवस्था में लगभग सौ वॉट ऊर्जा का विकिरण अवरक्त किरणों के रूप में करते है?) एवं कोशिकाओं एवं माँशपेशियों के रख रखाव में खर्च करते है। इस लिए भोजन से प्राप्त ऊर्जा का ज्यादा से ज्यादा मात्र 10 प्रतिशत ही हम अपनी अन्य कामों के लिए उपयोग में ला सकते हैं। यह लगभग 0.15 KWH प्रति व्यक्ति प्रति दिन होगा। यह दर्शाता है कि एक आधुनिक मानव को सुविधासम्पन्न जीवन यापन करने के लिए लगभग 100 मानवीय दासों के पूर्ण शारीरिक श्रम की आवश्यकता होगी। जाहिर है मानव स्वतंत्रता एवं प्रजातंत्र के इस युग में यह स्वीकार्य नहीं है। यह दर्शाता है कि शारीरिक ऊर्जा हमारी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता।

आइए, अब हम इस विषय पर चर्चा करते हैं कि सभी प्राणी (मानव भी) आखिर अपने शरीर को गर्म रखने के लिए ऊष्मा कैसे उत्पन्न करते हैं? जीवन्त पदार्थ एक नियंत्रित भट्ठी की तरह है जिसमें भोजन रूपी ईंधन जलकर ऊर्जा उत्पन्न करता है। उदाहरण के तौर पर भोजन से प्राप्त शर्करा एवं वसा श्वास द्वारा लिए गये ऑक्सीजन से रासायनिक प्रक्रिया द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड, जल एवं ऊर्जा उत्पन्न करता है। इस ऊर्जा का कुछ अंश हमारे शरीर को ऊष्मा द्वारा गर्म रखता है तथा बाकी हमारी मांशपेशीयों में भविष्य में उपयोग के लिए संचयित हो जाता है। यह संचयन भी रासायनिक प्रक्रिया द्वारा ही संभव हो पाता है।

ऊर्जा का अवशोषण एडिनोसिन डाइफास्फेट (ADP) के अणुओं द्वारा होता है, जो कि एक (Endothermic Reaction) ऊष्मा अवशोषी क्रिया द्वारा शरीर में उपलब्ध अकार्बनिक फास्फेट से जुड़कर एडिनोसिन ट्राइफास्फेट (ATP) के अणु बनाता है। शरीर के कम तापक्रम पर भी ऊर्जा संचयन की यह रासायनिक प्रक्रिया विशिष्ट उत्प्रेरकों के सहयोग से अनुकूल गति से होती है। इस प्रकार ATP हमारे शरीर में ऊर्जा का मुख्य संग्रहागार है। हमें जब आवश्यकता होती है, हमारा, मस्तिष्क माँशपेशियों को निर्देश देता है जिससे ATP के अणु वापस ADP में बदलकर ऊर्जा उन्मुक्त करते हैं। इस ऊर्जा का उपयोग आवश्यक कार्यो के सम्पादन एवं ऊष्मा के उत्पादन के काम में आता है। यहीं हमारा अग्नि से पहला सामना होता है। जीवन्त पदार्थ खुद ही

अग्नि का एक ऐसा स्वरूप है जिसमें भोजन रूपी ईंधन के दहन से ऊर्जा उत्पन्न होती है। जीवन्त पदार्थो में ऊर्जा का संचालन जिस कुशलता से अग्नि द्वारा सम्पादित हो रहा है वह हमें निःसन्देह चकित कर जाता है।

आइए, अब हम ऊर्जा के अन्य मुख्य स्रोतो की चर्चा करते है, यह सामान्यतः दहनशील पदार्थ है। यहाँ हमारा अग्नि से साक्षात सामना होता है। लगभग 25000 वर्ष पूर्व मानव ने अग्नि की खोज की, और तब से अग्नि का मानव सभ्यता पर जबर्दस्त प्रभाव रहा है। सर्वप्रथम मानव ने प्राकृतिक आग को उसमें दहनशील पदार्थो (लकडी, सूखे पत्ते, मृत पशुओं की चर्बी इत्यादि) को डालकर प्रज्वलित रख पाने की कला सीखी । फिर अग्नि को अपनी इच्छानुसार उत्पन्न कर पाने का गुर सीखा। अग्नि ने मानव जीवन को क्राँतिकारी ढँग से प्रभावित किया, उसे ऊष्मा एवं प्रकाश देकर ठंड एवं भय से निजात दिलाया। अग्नि में खाना पकाकर खाने से मानव का स्वास्थ्य बेहतर हुआ, धातुओं के आविष्कार एवं अग्नि द्वारा हथियार बनाने की कला ने मानव जाति को अन्य जीवों की अपेक्षा अधिक सबल बनाया। अग्नि का सबसे महत्वपूर्ण योगदान 19वीं सदी में वाष्प इंजन के आविष्कार से औद्योगिक क्रान्ति का जन्म होना था। इससे पश्चिमी सभ्यता में जबर्दस्त विकास हुआ। यह अपने साथ जीवाष्म ईंधन का युग लेकर आया। अन्तर्दहन इंजन एवं विद्युत जेनेरेटरों के आविष्कार ने ऊर्जा के उपयोग के ढँग में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये। आधुनिक मानव का प्रादुर्भाव हो चुका था और कोयला, खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस उसके लिये प्राथमिक आवश्यकताएं बन चुकी थी। इस प्रकार 20वीं सदी जीवाष्म ईंधन की सदी हुई। जीवाष्म ईंधन की प्राप्यता तथा इसके मूल्य ने विश्व के विकास के दर को निर्धारित किया। इससे विश्व राजनीति भी प्रभावित हुई। इस संदर्भ में यह उचित हो उठता है कि हम यह विचार करे की क्या ऊर्जा के इस मुख्य स्रोत (जीवाष्मीय ईंधन) पर 21वीं सदी तथा इसके बाद निर्भर किया जा सकता है? आइए हम इस मौलिक प्रश्न पर संख्यात्मक दृष्टि से गौर करें।

जीवाष्म ईंधन जैसे कोयला, खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस दरअसल हाइड्रोकार्बन हैं जो कि जानवरों एवं वृक्षो के अवशेषो के भूस्खलन द्वारा पृथ्वी के गर्भ में सदियों तक दबे रहने से बने हैं। इसमें भी ठीक भोजन की ही तरह ऊर्जा संचयित रहती है जो दहन द्वारा प्राप्त की जा सकती है:-

हाइड्रोकार्बन + ऑक्सिजन = (अग्नि) जल + कार्बन डाइक्साइड + ऊर्जा

भोजन तथा जीवाष्म ईंधन जैसे हाइड्रोकार्बन उपरोक्त रासायनिक प्रक्रिया द्वारा ऊर्जा इसलिए उन्मुक्त करते है चुँकि इनके परमाणुओं के बीच का रासायनिक बँधन उत्पादित यौगिकों (जल तथा कार्बन डाइऑक्साइड) के परमाणुओं के रासायनिक बँधन की अपेक्षा कमजोर होते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि प्रति कार्बन परमाणु इलेक्ट्रॉनिक बँधन ऊर्जा (Binding Energy) ईंधन में उत्पादित यौगिकों की अपेक्षा कम होता है तथा दोनों के बीच का अन्तर ही रासायनिक दहन की प्रक्रिया में ऊर्जा के रूप में उन्मुक्त होता है। इलेक्ट्रॉनिक बँधनो में प्रति परमाणु तकरीबन एक इलेक्ट्रॉन वोल्ट के कुछ अंश तक की ऊर्जा निहित रहती है। एक अणु में ऐसे बहुत से संयोजन होते है जो कि रासायनिक दहन की अभिक्रिया द्वारा पुनर्व्यवस्थित होते है। इस प्रकार तकरीबन

उन्मुक्त ऊर्जा /अणु ~ 1 eV $\sim 10^{-19}$ वॉट सेकण्ड

ज्ञातव्य है कि किसी भी पदार्थ के एक ग्राम अणु (One gram mole) में 6×10^{23} अणु होते हैं। इससे यह हिसाब लगाया जा सकता है कि एक ग्राम अणु ईंधन के दहन से कितनी ऊर्जा उन्मुक्त होगी। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि एक टन हाइड्रोकार्बन लगभग कुछ हजार KWH ऊर्जा उन्मुक्त कर सकता है। पृथ्वी पर अब

तक ज्ञात जीवाष्मीय ईंधन की मात्रा लगभग ~ 10^{12} टन है, जिससे मात्र 10^{16} KWH ऊर्जा उन्मुक्त हो सकती है। दूसरी ओर पृथ्वी के 5 अरब निवासियों को उचित जीवन शैली से निर्वाह के लिए लगभग $6000 \times 5 \times 10^{9}$ KWH प्रति वर्ष ~3×10^{13} KWH प्रति वर्ष ऊर्जा की आवश्यकता है। अतः जीवष्म ईंधन मात्र 300 वर्षो तक ही पर्याप्त होंगे। आकलन यह दर्शाते हैं कि प्राकृतिक गैस 50 वर्षो, खनिज तैल 100 वर्षों एवं कोयला लगभग 500 वर्षों में समाप्त हो जायेगा ।

इसका मूलभूत निष्कर्ष यह है कि जिस 10^{12} Ton जीवाष्म ईंधन को बनाने में पृथ्वी को लगभग 1 अरब वर्ष लगे, उसी सम्पदा को आज मनुष्य जाति मात्र 300 वर्षो से भी कम के अन्तराल में खर्च कर देगा। शेपर्ड द्वारा बनाया गया रेखाचित्र (चित्र 2) इस तथ्य को काफी नाटकीयता से दर्शाता है। जीवाष्मीय ईंधन का युग मानो पूरे मानव इतिहास के संदर्भ में एक क्षणिक घटना है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि जीवाष्म ईंधन के अन्य अनेक उपयोग जैसे (पेट्रोकेमिकल का उत्पादन) भी है। यह अतीत की ऐसी धरोहर है जिस पर हमारा ही नहीं अपितु आनेवाली सभी पीढ़ीओं का बराबर अधिकार है। ऐसे में क्या यह उचित होगा कि हम इसे मात्र अपने आप पर खर्च करने का एक पक्षीय निर्णय ले लें तथा भविष्य के लिए कुछ भी बचाकर न रखें? दूसरी महत्त्वपूर्ण समस्या जीवाष्म ईंधन के निरंतर बड़े पैमाने पर उपयोग से होनेवाले पर्यावरण प्रदूषण से है। यह हरित कक्ष प्रभाव (Green House Effect) एवं पृथ्वी के जलवायु के तापमान में बढ़ोतरी जैसी संभावनाओं को जन्म देता है, जो कि पृथ्वी पर जीवन के लिए दूरगामी हानिकारक प्रभाव डालने वाला सिद्ध हो सकता है। इसका अर्थ यह है कि हमें जीवाष्म ईंधन के प्रयोग से दूषित हुए वातावरण को प्रदूषण रहित भी बनाते रहना होगा। इस कार्य में आए व्यय को अगर जीवाष्म ईंधन के मूल्य में जोड़ा जाए तो यह ईंधन इतने सस्ते में उपलब्ध नहीं हो सकेगा। एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष पृथ्वी पर जीवाष्म ईंधन के असमान वितरण से जुड़ा है। जिन देशों मे पृथ्वी की मात्र 6 प्रतिशत जनसंख्या वास करती है उनके पास पूरे विश्व की 66 प्रतिशत खनिज तेल सम्पदा है। जिन देशों के पास यह सम्पदा उपलब्ध नही है, वे ऊर्जा के सम्बन्ध में असुरक्षित महसूस करते हैं। यह असमानता अनेक राजनीतिक विवादों एवं युद्धों का मूल कारण रही है। उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि जीवाष्म ईंधन को विश्व की ऊर्जा समस्या का दीर्घकालीन निदान नही माना जा सकता है।

हमने देखा कि भोजन तथा जीवाष्म ईंधन जैसे हाइड्रोकार्बन में ऊर्जा परमाणुओं के कमजोर इलेक्ट्रॉनिक बन्धनो में निहित है। परंतु आखिर यह ऊर्जा उनमें आई कहाँ से ? दरअसल यह सूर्य से प्राप्त होती है जो कि आकाश में स्वयं अग्नि का एक प्रचण्ड स्वरूप है। आइए, देखें आखिर यह कैसे होता है।

पौधो में उपलब्ध हरे रंग का पदार्थ Chlorophyll सूर्य के विकिरण के सम्पर्क में आकर प्रकाश संश्लेषण की निम्नलिखित प्रक्रिया सम्पादित करता है:-

कार्बन डाइऑक्साइड + जल + प्रकाश = शर्करा , कार्बोहाइड्रेट इत्यादि + आक्सीजन

पृथ्वी पर लगभग 10^{17} WATT ऊर्जा सूर्य विकिरण से प्राप्त होती है। इसका लगभग 1/100 वाँ प्रतिशत ही पौधों द्वारा प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा संचयित हो उनके बढ़ने में योगदान दे पाता है। पृथ्वी की कुल वृक्ष सम्पदा का लगभग दस लाखवाँ हिस्सा भूस्खलन द्वारा पृथ्वी के गर्भ में दबकर जीवाष्म ईंधन में रूपांतरित हो पाता है। अतः सौर ऊर्जा से मात्र 10^{7} Watt ही जीवाष्म ईंधन में संचयित हो पाता है। इस प्रकार पिछले एक अरब वर्षों में अधिकाधिक 10^{17} KWH ऊर्जा ही जीवाष्मीय ईंधन में संचयित हो सकती है। इतनी ऊर्जा 10^{13} टन जीवाष्म ईंधन से उपलब्ध हो पाएगी। अतः पूरे विश्व में 10^{13} टन से अधिक जीवाष्म ईंधन प्राप्त होने की सम्भावना नगण्य है।

यह संख्या हमें अचम्भित एवं भयभीत दोनो ही करती है। यह एहसास हमें आभारी एवं आश्चर्यचकित कर जाता है कि अग्निदेव ने सूर्य के माध्यम से हमारी हजारों सालों तक की सुख सुविधा हेतु जीवाष्म ईंधन की इतनी अधिक सम्पदा की संरचना की है। दूसरी ओर यह जानकारी भयभीत कर देती है कि जीवाष्म ईंधन की यह महत्तम मात्रा हमारी जानकारी के प्राप्य स्त्रोतों के लगभग बराबर है,जो कि काफी तेजी से खत्म होते जा रहें हैं। अतः इन स्त्रोतों के अलावा अब नए स्त्रोतों का पाया जाना लगभग असम्भव है। यह हमें अग्निदेव के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने एवं प्रार्थना करने को प्रेरित करती है.... हे अग्निदेव, तूने हमें बहुत कुछ दिया, हमने अज्ञानवश अबतक इसका अपव्यय किया है। अब हमें ज्ञान प्रदान करो।

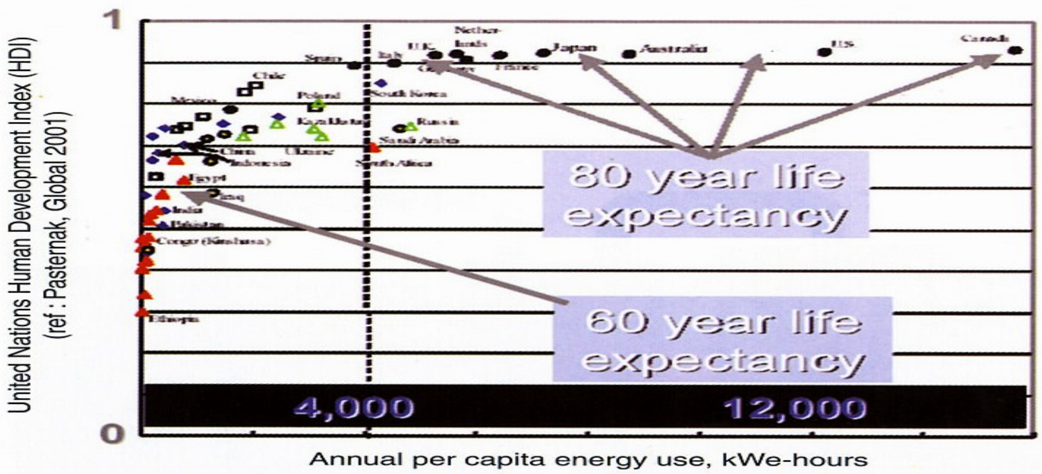

Figure 1. Human Development Index (or life expectancy at birth) versus annual per capita electricity consumption .

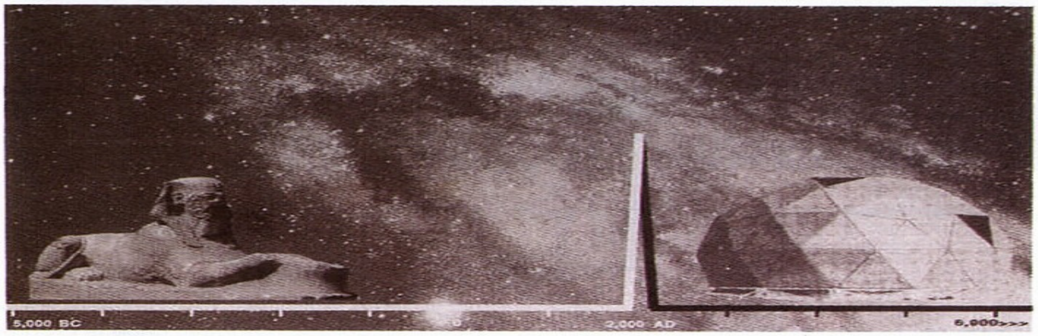

Figure 2. Fossil fuel era in the few thousand year history of mankind

आइए, अब हम ऊर्जा के नवीकरणीय स्त्रोतों की चर्चा करें। सूर्य रूपी अग्नि द्वारा पृथ्वी पर काफी मात्रा में ऊर्जा प्रदान होती है, हालाँकि उसका स्वरूप काफी विरल है। कुल 10^{17} वॉट का दो तिहाई हिस्सा सीधे ऊष्मा में रूपांतरित होता है। इस ऊर्जा का संचयन एवं उसका विविध तरीकों से उपयोग सौर ऊर्जा के उपयोग की श्रेणी में आएगा। इस ऊर्जा का लगभग एक तिहाई जल चक्र के वाष्पीकरण, अवक्षेपण तथा संग्रहण के उपयोग में आता है। यह वह ऊर्जा है जिसे पर्वतों से उतरती नदियों के प्रवाह के रूप में देखा जा सकता है एवं जिसका उपयोग विविध तरीकों से, जैसे पनचक्की तथा जल विद्युत परियोजनाओं द्वारा, विद्युत उत्पादन में होता है। पृथ्वी पर प्राप्त सौर ऊर्जा का लगभग आधा प्रतिशत पवन की गतिज ऊर्जा में संचयित होती है, इसका भी पवन चक्की द्वारा विद्युत उत्पादन में इस्तेमाल किया जा सकता है। सौर ऊर्जा की सबसे कम मात्रा लगभग

1/100 प्रतिशत ही प्रकाश संश्लेषन द्वारा वृक्षों में संचयित होता है, और जैसा कि हमने पहले चर्चा की है उसका भी बेहद छोटा हिस्सा (दस लाखवाँ भाग) भूस्खलन द्वारा जमीन में दबकर जीवाष्मीय ईंधन में परिवर्तित होता है। इस संदर्भ में आइए देखते हैं कि सौर ऊर्जा के अन्य स्वरूपों के इस्तेमाल की कैसी संभावनाएँ हैं। सर्वप्रथम जलशक्ति की चर्चा करते हैं। नदियों में बहते पानी में निहित ऊर्जा का उपयोग प्राचीन काल से होता आया है। इसका उपयोग पनचक्कियों द्वारा धान पीसने, सिंचाई तथा करधों (looms) को चलाने आदि में होता आया है। इसका आधुनिक उपयोग जल विद्युत स्टेशनों में डायनमों को चलाकर विद्युत निर्माण में है। विद्युत निर्माण के इस तरीके के काफी फायदे हैं। यह प्रदूषण रहित, नवीकरणीय, एवं तुलनात्मक दृष्टि से कम खर्चीला है। परन्तु इसमें सबसे बडी कठिनाई भौगोलिक परिस्थितियों पर इसकी निर्भरता के कारण आती है। इसके लिए एक बडे भूभाग की आवश्यकता पड़ती है, जिसके कारण ऐसी परियोजनाओं के कार्यान्वयन हेतु बहुत सारे परिवारों के विस्थापन की जरूरत पड़ती है। भारतवर्ष में जल विद्युत द्वारा लगभग 85 गीगावॉट ऊर्जा उत्पन्न करने की क्षमता है जो कि हमारी आवश्यकताओं का लगभग 10 प्रतिशत है। वास्तविक संस्थापित क्षमता अब भी पूरी क्षमता का मात्र एक तिहाई ही है। अतः भारतवर्ष में जल विद्युत परियोजनाओं में काफी बढोतरी की संभावनाएं अभी भी बाकी हैं।

सौर ऊर्जा चुँकि काफी विरल है, अतएव इसका सीधा उपयोग शहर के केन्द्रीय औद्योगिक संस्थानों में नहीं हो सकता। यह केवल रिहायशी इलाकों में सोलर कुकर, सोलर वॉटर हिटर तथा सोलर रेफ्रिजरेशन के ही काम में लाया जा सकता है। यहाँ भी बहुत सारी समस्यायें विद्यमान हैं जिनका संतोषजनक निवारण अबतक नही हो पाया है। उदाहरण स्वरूप रात के समय तथा उन दिनों के लिए जब आकाश मेघाच्छादित हो, सौर ऊर्जा के संग्रहण की समस्या आती है। सोलर फोटो वोल्टेयीक सेल द्वारा हालाँकि सूर्य की किरणों से प्राप्त ऊर्जा को सीधे ही विद्युत में परिवर्तित किया जा सकता है, परन्तु न केवल यह खर्चीला है बल्कि इसके रख रखाव पर भी काफी ध्यान देना पड़ता है और यह अभी भी बहुत प्रभावशाली नहीं है। इसलिए इसका उपयोग कुछ ही गिने चुने क्षेत्रों जैसे अंतरिक्ष वाहन के शक्ति निकाय एवं अगम प्रदेशों के शक्ति निकायों में ही हो पाया है। सौर ऊर्जा के उपयोग का दूसरा तरीका बायोमास के उत्पादन द्वारा हो सकता है। इसके लिए जल्दी तथा बहुतायत पैदावार वाली फसलों को या तो सीधे जलाकर, या उनसे अल्कोहल बना उसका द्रव ईंधन के तौर पर इस्तेमाल करना या फिर उससे बायोगैस बना उसका घरों एवं छोटे उद्योगों में सरलतापूर्वक वितरण कर पाने जैसी काफी योजनाएँ शामिल हैं। ऐसी आशाएं थी कि ग्रामीण भारतीय अर्थव्यवस्था में ये स्रोत शीघ्र आत्मसात कर लिए जाएंगे परंतु इनको स्वीकार करने की प्रक्रिया काफी धीमी रही है तथा इसका अभी तक ग्रामीण व्यवस्था के साथ समाकलन नहीं हो पाया है।

पवन शक्ति का भी सीमित उपयोग हो सकता है और वह भी केवल समुद्र के तटवर्तीय इलाकों में जहाँ पवन का वेग अधिक होता है। भारतवर्ष में पवन ऊर्जा की संस्थापित क्षमता 1.7 गीगावॉट है, परंतु इसका लगभग 10 प्रतिशत ही उपयोग में आ पाता है जोकि काफी कम है।
सौर ऊर्जा के उपयोग के कई नवीनतम तरीके भी हैं जिनकी संक्षिप्त चर्चा हम लेख के अंत में करेगे।
हम अब सूर्य में व्याप्त अग्नि की ओर मुखातिब होते हैं। यह प्रश्न उठता है कि यहाँ ऊर्जा का कौन सा मूलभूत स्रोत विद्यमान है। हम देखेंगे कि यह संधान हमें नाभिकीय ऊर्जा की ओर ले जाता है। ज्ञातव्य है कि सूर्य लगभग 5 अरब वर्षों से लगातार इसी प्रकार प्रज्वलित है। इसलिए सूर्य से लगभग ....

$4x10^{26} \quad x \quad 5x10^{9} \quad x \quad 3x10^{7} \quad \sim 6x10^{43}$ जूल

(Watts of radiation x No of Yrs. x Seconds/Yr ~ Energy in Joules

ऊर्जा विकिरित हुई है ! सूर्य की संहति 10^{33} ग्राम के लगभग है। अगर हम यह मानते हुए चलें कि सूर्य का प्रत्येक परमाणु रासायनिक अग्नि में जल चुका है जहाँ कि इलेक्ट्रॉनिक संयोजनों की संरचना के बदलाव के फलस्वरूप ऊर्जा उत्पन्न हुई है, तब भी मात्र

10^{33} x 6×10^{23} x 1.6×10^{-20} ~ 10^{37} जूल

mass x no. of atoms/gm x released energy/ atom total energy released

10^{37} जूल ऊर्जा ही उत्पन्न हो सकती थी। यह दर्शाता है कि सम्पूर्ण सूर्य के रासायनिक दहन से प्राप्त ऊर्जा, सूर्य द्वारा कुल विकिरित ऊर्जा से लाखों गुना कम है। हमारा सूर्य इस तीव्र गति से ऊर्जा उत्पन्न करते रहने के बावजूद युवा ही जान पड़ता है। यह दर्शाता है कि सूर्य में उत्पन्न अग्नि रासायनिक अग्नि नही है। वह ताप नाभिकीय अग्नि (thermo nuclear fire) है!!!

नाभिकीय ऊर्जा (Nuclear Energy) शायद 21वीं सदी की सबसे बड़ी खोज है। इसकी शुरुआत आइन्सटीन ने की जो अपनी सापेक्षतावाद सिद्धांत के प्रभावों की खोज करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पदार्थ एवं ऊर्जा एक दूसरे में रुपान्तरित हो सकते हैं। द्रव्यमान (Mass) दरअसल ऊर्जा का अतयंत केन्द्रित स्वरूप है। उनके प्रसिद्ध समीकरण (equation)

$E=MC^2$ से यह अच्छी तरह समझा जा सकता है।

यहाँ C निर्वात (Vacuum) में प्रकाश का वेग है, जिसका मान बहुत अधिक है।

यह दर्शाता है कि पदार्थ का एक ग्राम नष्ट होकर लगभग 10^{14} जूल ऊर्जा उत्पन्न कर सकता है। इस प्रकार सूर्य द्वारा अबतक विकिरित कुल ऊर्जा मात्र 10^{29} ग्राम पदार्थ के नष्ट होने से उत्पन्न हुई है जो कि सूर्य की संहति का मात्र 0.01 प्रतिशत ही है। यह इतनी कम मात्रा है कि इसका कोई प्रभाव मापा नही जा सकता। इस प्रकार सूर्य से इतनी अधिक मात्रा में विकिरित ऊर्जा के संभावित स्रोत की जानकारी होती है।

आइए अब हम इस स्रोत को थोड़ा और बेहतर तरीके से जाने। परमाणु के बोर-रदरफोर्ड मॉडल में यह दर्शाया गया है कि किसी भी परमाणु की लगभग पूरी संहति एक छोटे घनावेशित केन्द्र (लगभग एक सेमी का 1/100 खरबवाँ हिस्सा) जो कि प्रोटॉनो और न्यूट्रॉनों से बना है, में निहित है। ऋणावेशित इलेक्ट्रान परमाणु को उदासीन बनाते हैं, एवं ये केन्द्र के इर्द- गिर्द लगभग 100000 गुना बड़े क्षेत्र में चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए रासायनिक प्रतिक्रियाओं (जहाँ केवल इलेक्ट्रॉनिक संयोजनों में बदलाव आता है) के प्रतिकूल नाभिकीय अभिक्रियाओं में नाभिक खुद पुनर्व्यवस्थित होते हैं जिसके फलस्वरूप पदार्थ के क्षय होने की संभावना रहती है। ऐसी परिस्थिति में पदार्थ का क्षय ऊर्जा के रूप में प्राप्त होता है। दो प्रकार की महत्वपूर्ण नाभिकीय अभिक्रियाएं होती हैं जिनसे ऊर्जा उत्पन्न होती है। एक नाभिकीय विघटन की प्रक्रिया है जिसमें यूरेनियम जैसे भारी तत्त्व हलके नाभिकों मे विघटित होते हैं। विघटन के पश्चात बने हलके तत्वों में प्रति-न्यूक्लियान बन्धन ऊर्जा युरेनियम की अपेक्षा अधिक है, यानि कि हलके तत्वों के न्युक्लियोन युरेनियम की तुलना में ऊर्जा की अपेक्षाकृत गहरी खाई में विराजमान है (चित्र-3)। इसके फलस्वरूप नाभिकीय विघटन की प्रक्रिया में ऊर्जा उत्पन्न होती है। यही परमाणु बम और ऊर्जा उत्पन्न करने वाले नाभिकीय रिएक्टरों का भी आधारभूत सिद्धान्त है जिनका विश्व में व्यापक रूप से प्रयोग हो रहा है। दूसरी प्रक्रिया नाभिकीय संयोजन की है जिसमें हाइड्रोजन जैसे हलके तत्व आपस में जुड़कर हीलियम का निर्माण करते हैं एवं ऊर्जा भी उत्पन्न करते हैं। यहाँ भी हीलियम के न्युक्लियोन हाइड्रोजन की तुलना में ऊर्जा की अपेक्षाकृत गहरी खाई में रहते हैं। ऊर्जा का यह अन्तर, नाभिकीय

संयोजन की प्रक्रिया में उत्पादों के गतिज ऊर्जा के रूप में प्राप्त होता है। नाभिकों के बीच बंधन ऊर्जा स्ट्रॉन्ग न्युक्लियर बल की देन है, जबकि परमाणुओं के बीच की बंधन ऊर्जा विद्युत चुम्बकीय बलों द्वारा निर्धारित होती है। अतः प्रति न्यूक्लिओन नाभिकीय बन्धन ऊर्जा, प्रति परमाणु इलेक्ट्रॉनिक बन्धन ऊर्जा के मुकाबले दस लाख गुना अधिक सक्षम है। यही कारण है कि समान भार की नाभिकीय अभिक्रियाओं से रासायनिक प्रतिक्रियाओं की अपेक्षा लगभग 10 लाख गुना अधिक ऊर्जा उत्पन्न होती है। दूसरे शब्दों में, नाभिकों में ऊर्जा संकलन, परमाणुओं की अपेक्षा कहीं अधिक सघन है।

नाभिकीय संयोजन की प्रक्रिया ही सूर्य को शक्ति प्रदान करती है। सूर्य में प्रोटॉनो के ताप नाभिकीय संयोजन की प्रक्रिया द्वारा ऊर्जा उन्मुक्त होती है। इस प्रक्रिया में हाइड्रोजन के चार नाभिक (यानि कि चार प्रोटॉन) संलयित होकर हीलियम बनाते हैं।

$$H+H+H+H = \text{हीलियम} + \text{इलेक्ट्रॉन} + \text{ऊर्जा}$$

इस प्रक्रिया में कार्बन, नाइट्रोजन तथा ऑक्सीजन की उपस्थिति उत्प्रेरक का काम करती है।

सूर्य के उच्च तापमान में नाभिकीय संलयन की यह प्रक्रिया हो पाती है। घनावेशित प्रोटॉन एक दूसरे को कुलॉम्ब बलों के कारण विकर्षित करते हैं। ऐसे में उच्च ताप द्वारा नाभिकों की गतिज ऊर्जा बढाकर उन्हें कुलॉम्ब अवरोध के बावजूद क्वाण्टम टनलिंग द्वारा निकट लाया जा सकता है जिससे कि वे आपस में संयोजित हो सकें। पृथ्वी पर नाभिकीय संयोजन की प्रक्रिया को हाइड्रोजन बमों में सफलतापूर्वक प्रदर्शित किया गया है। परन्तु शान्तिपूर्ण कार्यों के लिए नाभिकीय संयोजन द्वारा प्राप्त ऊर्जा का प्रयोग कर पाना अभी भी एक कठिन चुनौति है। इसका मूल कारण है उच्च तापमान पर एक अच्छी परिसीमन युक्ति का न होना जो आवेशित कणों को उच्च ताप पर भी अपने भीतर सीमित रख सके। सूरज और सितारों का तीव्र गुरूत्वाकर्षण एक बेहद अच्छे परिसीमन का कार्य कर पाता है। परन्तु पृथ्वी पर ऐसा हो पाना अव्यवहारिक है। इसलिए यहाँ चुम्बकीय बोतलों का प्रयोग किया जाता है। हम बाद में इनपर विस्तार से चर्चा करेंगे।

नभिकीय विखण्डन के सिद्धान्त पर बने रियेक्टरों का व्यावहारिक उपयोग पिछले 50 वर्षो से होता आया है। इस प्रकार आज फ्रांस अपनी 75 % से अधिक ऊर्जा इन विघटन रिएक्टरों से ही प्राप्त करता है। सं.रा.अमेरिका 25 %, जापान 33% तथा कोरिया 40 % ऊर्जा की पूर्ति इन नाभिकीय विघटन रिएक्टरों की मदद से करता हैं। भारतवर्ष अपनी ऊर्जा आवश्यकता का मात्र 3 % ही इनसे प्राप्त करता है। वर्ष 2020 तक 20 गीगावॉट नाभिकीय ऊर्जा से प्राप्त करने की एक बड़ी योजना पर आजकल काम चल रहा है। परन्तु ऊर्जा प्राप्त करने की नाभिकीय विघटन तकनीक के साथ कुछ चुनौतियाँ भी जुड़ी हुई हैं। पहली समस्या रेडियोधर्मी अपशिष्टों को नष्ट करने की है। विघटन की प्रक्रिया में कुछ ऐसे रेडियोधर्मी तत्व बनते हैं जिनकी आयु काफी लम्बी होती है। ऐसे तत्वों को नष्ट करना या उनका सही ढंग से निस्तारण करना अत्यंत आवश्यक है ताकि वो कोई खतरा न पैदा करे। इस संदर्भ में एक ऐसी तकनीक का विकास किया गया है जिसमें रेडियोधर्मी अवशिष्टों के आयतन को घटाकर फिर उन्हें एक ठोस मैट्रिक्स में क्रियाहीन कर किसी अप्रयुक्त गहरे खादान में डाल दिया जाता है। यह तकनीक काफी विकसित हो चुकी है और सुरक्षित भी है। परन्तु फिर भी कुछ पर्यावरण संरक्षण समूह इसका जबर्दस्त विरोध कर रहें हैं। दूसरी विधि जो अभी विकसित की जा रही है वह नाभिकीय विघटन एवं संयोजन रिएक्टरों में एक्टिनाइड का दहन कर लम्बी आयु वाले रेडियोधर्मी तत्वों को छोटी आयु के समस्थानिकों में परिवर्तित करने की है। इस प्रक्रिया में नाभिक से कुछ और ऊर्जा भी प्राप्त किया जा सकता है। ये विधियाँ अभी विकास के शुरूआती दौर में हैं। विघटन रिएक्टरों से जुड़ी दूसरी बड़ी समस्या विकिरण एवं

सुरक्षा की है। थ्री माइल आइलैंड (Three mile island) एवं चर्नोबिल रिएक्टरों में हुई दुर्घटनाओं ने इस भय को बढावा दिया है। हालाँकि इस विषय में आम जनता की चिन्ताओं को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता, परन्तु यहाँ यह टिप्पणी उचित होगी कि पर्याप्त ध्यान तथा सावधानी बरतने की वजह से एकाध ही ऐसी दुर्घटनाएँ हुई है। यह कहा जा सकता है कि नभिकीय विखण्डन शक्ति उद्योग का रिकार्ड काफी अच्छा रहा है। लोगों के मन में अदृश्य विकिरण को लेकर एक विवेकहीन भय समाया हुआ है, जिसका निवारण शिक्षा एवं नाभिकीय विखण्डन ऊर्जा उद्योग तथा अन्य स्पर्धात्मक ऊर्जा उद्योगों में हुई दुर्घटनाओं के वास्तविक आँकड़ों की तुलना से किया जा सकता है। यह जरूरी है कि ऐसे आंकड़े (data) स्वनिर्भर अपक्षपाती संगठनों द्वारा एकत्रित एवं विस्तरित हो, न कि तकनीक विशेष को बढावा देने में रूचि रखने वाले संगठनों द्वारा। नाभिकीय विखंडन से जुड़ी तीसरी समस्या है यूरेनियम तथा थोरियम जैसे ईंधनों का पृथ्वी पर असमान रूप से पाया जाना। इससे कई राष्ट्रों की ऊर्जा समस्या का निदान नहीं हो पाएगा। अंततः नाभिकीय विखण्डन के साथ इस बात का खतरा कि विखंडनीय पदार्थ किसी उग्रवादी संगठन या धूर्त राष्ट्र के हाथ न लग जाए जिससे कठिन समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। इन सभी चुनौतियों से निबटा जा सकता है, पर फिर भी इसकी वजह से नाभिकीय विखंडन ऊर्जा ऊद्योग की काफी बदनामी हुई है जिसके फलस्वरूप विखंडन शक्ति संकायों (fission power station) का विकास काफी धीमा हुआ है। पिछले दशक में तो इसमें जरा भी प्रगति नहीं हुई । परन्तु अब इस बात के तेजी से होते एहसास के साथ कि नाभिकीय विखण्डन द्वारा प्राप्त ऊर्जा की अनुपस्थिति में या तो ऊर्जा की घोर कमी या फिर दूषित पर्यावरण की भयंकर समस्या का सामना करना पड़ सकता है, इस तकनीक से प्राप्त ऊर्जा का प्रगतिशील विश्व की ऊर्जा स्थिति में महत्वपूर्ण भूमिका का अंदाजा लगाया जाने लगा है।

अब हम अपनी चर्चा को नाभिकीय संलयन की विधि की ओर मोड़ते हैं। इस विधि का अभी तक औद्योगिकरण नहीं हो पाया है। फिर हम इसपर निवेश क्यों करें? इस विधि के अनेक फायदे हैं जिसके कारण इसका शीघ्रातिशीघ्र विकास एवं परिनियोजन महत्वपूर्ण हो जाता है। ऐसे कौन से फायदे हैं?

सबसे महत्वपूर्ण बात है इस प्रक्रिया में उपयुक्त ईंधन का असीमित रूप से पाया जाना। ड्युटेरिम हाइड्रोजन का एक भारी समस्थानिक है एवं भारी पानी का एक अवयव है। भारी पानी का अथाह स्रोत समुद्री जल है जहाँ यह प्राकृतिक रूप से 1/6000 वें हिस्से के तौर पर पाया जाता है। अतः यदि हम शुद्ध ड्यूटेरियम संलयन प्रतिक्रिया का उपयोग करें तो हमारे पास ईंधन का अथाह समुद्र है, जो कि मनुष्य जाति के लाखों वर्षों की जरुरत के लिए पर्याप्त होगा। अगर हम ट्रीशियम का प्रयोग करते हैं जो उसे भी लीथियम से उत्पन्न किया जा सकता हैं और लीथियम समुद्र तथा पृथ्वी की ऊपरी सतह पर बड़े पैमाने पर वितरित है। इसप्रकार ड्यूटेरियम तथा ट्रीशियम दोनो ही सभी देशों को प्राप्य हैं। यह सभी के लिए ऊर्जा की दृष्टि से संतोषजनक है। दूसरी बात है संलयन की विधि से प्राप्त ऊर्जा का स्वच्छ होना। इससे न तो वातावरण दूषित होने का खतरा है और न ही हरित कक्ष गैसों के उत्सर्जन का भय। तीसरी बात है इस प्रक्रिया द्वारा रेडियोधर्मी कचरे का नगण्य उत्पादन और जो भी थोड़ी बहुत रेडियोधर्मिता पाई जाती है उसे पूरी तरह नष्ट किया जा सकता है। ऐसा इसलिए है कि नाभिकीय विखण्डन की प्रक्रिया के प्रतिकूल इस प्रक्रिया के उत्पाद रेडियोधर्मी नही होते। इस प्रक्रिया से निकलने वाले तेज गति के न्यूट्रॉन आसपास के पदार्थों को रेडियोसक्रिय कर देते हैं। इस हानिकारक प्रभाव को कम एक्टीवेशन वाले पदार्थों के इस्तेमाल से कम किया जा सकता है। यह वर्तमान शोध का विषय है। उच्च संलयन अभिक्रियाओं जैसे प्रोटोन-बोरोन, ड्यूटेरियम-हीलियम 3, से इस हानिकारक प्रभाव से पूरी तरह निजात पाया जा सकता है। परन्तु यह तभी संभव है जब उच्च तापमान के प्लाज़्मा को चुम्बकीय क्षेत्र द्वारा परिसीमित करने की समस्या का हल निकल पाए। चौथी बात है नाभिकीय संलयन प्रक्रिया का अत्यन्त सुरक्षित होना। इस अभिक्रिया में दहन (प्रज्वलन) बड़ी मुश्किल से होता है, इसलिए chain reaction (श्रृंखला अभिक्रिया) तथा melt down (मेल्ट डाउन) होने की कोई संभावना नहीं है। अंत में इससे नाभिकीय विस्तार जैसे किसी खतरे की कोई

आशंका नही है। ऐसी कोई चिन्ता भी नहीं है कि आतंकवादी संगठनों तथा धूर्त राष्ट्रों के हाथ नाभिकीय हथियार बनाने में उपयुक्त कोई सामग्री पड़ सकती है। इस प्रकार नाभिकीय संलयन मानव जाति के लिए ऊर्जा सम्बंधी सभी समस्याओं का हल जान पड़ता है। विश्व में इस प्रक्रिया के ऊपर अनेक योजनाओं के तहत काफी शोध कार्य हो रहा है।

प्रयोगशाला में संलयन की प्रक्रिया कैसे हो ? हमने पहले चर्चा की है कि इसके लिए पदार्थ को उच्च तापमान पर लाना आवश्यक है ताकि पर्याप्त संलयन अभिक्रियाएँ हो सके। ड्यूटेरियम तथा ट्रीशियम मिश्रण के लिये 10 करोड़ डिग्री के तापमान की आवश्यकता है तथा यह भी जरूरी है कि उनके घनत्व तथा परिसीमन समय का गुणांक एक नियत मान से अधिक हो, तभी संलयन की अग्नि प्रज्वलित हो सकती है तथा महान ताप नाभिकीय ***अग्नि*** प्रकट हो पाएगी। चुम्बकीय क्षेत्रों द्वारा परिसीमित करने की विधि में पदार्थ को उप वातावरणीय धनत्व (वायु से लगभग 100000 गुना कम) पर 100 करोड़ अंश तापमान पर गर्म कर दीवारों से दूर कुछ सेकण्डों के लिए चुम्बकीय क्षेत्र की मदद से रखना होगा। अगर ऐसा हुआ तो ही संलयन की पर्याप्त अभिक्रियाएँ हो पाएँगी जिससे ऊर्जायुक्त न्यूट्रॉन उत्पन्न होंगे एवं बाह्य निर्बंध (Outer blankets) पर संग्रहित हो ऊष्मा उत्पन्न करेंगे, जिससे पानी को वाष्प में परिवर्तित कर वाष्प टरबाईन्स (Steam terbines) विद्युत उत्पन्न किया जाएगा (चित्र-4a)। संलयन प्रक्रिया में उत्पन्न हीलियम के परमाणु संलयन संयंत्र के भीतर गर्म पदार्थों द्वारा अवशोषित होते हैं तथा हम जैसे-जैसे ईंधन संयंत्र में डालते हैं, ये ईंधन को गर्म रखने में सहायक सिद्ध होते हैं। इस प्रकार संलयन की प्रक्रिया जब प्रज्वलित हो उठती है तो यह लगातार प्रज्वलित रह सकती है। इस उद्यम की सफलता की कुंजी चुम्बकीय पात्रों (Magnetic Bottals) में है जो गर्म ईंधन को संकाय की दीवारों से अलग रखता है (चित्र-4b)। 10 करोड़ अंश के तापमान पर पदार्थ प्लाज़्मा अवस्था में होता है। पदार्थ की प्लाज़्मा अवस्था में प्रत्येक परमाणु इलेक्ट्रॉन और नाभिक में टूट चुके होते हैं। इसप्रकार पदार्थ की प्लाज़्मा अवस्था उच्च ताप पर नाभिक एवं इलेक्ट्रॉन का मिश्रण है। इन आवेशित कणों के सम्मिश्रण में अनेक गुण हैं, जो इन्हें सामान्य गैस की अपेक्षा भिन्न दिखलाते हैं। एक संलयन अभियंता के दृष्टिकोण से इसका सबसे अच्छा गुण विद्युत धारा तथा सूक्ष्म तरंगो (Microwaves) के प्रभाव में गर्म हो जाने से है जिनकी वजह से इसे प्रज्वलन तापमान तक आसानी से गर्म किया जा सकता है। वास्तव में विश्व की अनेक प्रयोगशालाओं में यह तापमान उत्पन्न किया जा चुका है। परन्तु इस संदर्भ में प्लाज़्मा अवस्था का सबसे बड़ा अवगुण उसकी सामूहिक गतिविधियों से संबंधित है जो विद्युत चुम्बकीय क्षेत्रों में उथल पुथल मचा कर बदलाव ले आता है। नतीजतन ऊष्मा का क्षय होने लगता है जिससे अग्नि ठंडी पड़ जाती है जबकि उसे गर्म तथा प्रज्वलित रहना चाहिए। प्लाज़्मा विज्ञान को इसे समझने में अनेकों दशक लग गए कि इन सामुहिक गतिविधियों का कारण क्या है। इनसे कैसे बचाव किया जा सकता है तथा किस प्रकार चालाकी से इन्हीं गतिविधियों की मदद से नाभिकीय संलयन अग्नि को प्रज्वलित एवं बरकरार रखा जा सकता है। चित्र- 5 में प्रज्वलित संलयन रिएक्टर के तरफ अग्रसर होने के विकास को दर्शाया गया है। नाभिकीय संयोजन के शोधकार्य के शुरूआती दिनों की अपेक्षा आज इसके महत्वपूर्ण पैमानों में लगभग 100000 गुणा सुधार हुआ है। आज हमें इसमें मात्र 5 गुणा सुधार करने पर एक सफल औद्योगिक संयोजन रिएक्टर मिल सकता है (चित्र-5)। सं.रा.अ. तथा यूरोप के कई वृहद टोकामैकों (Tokamaks) में यह कई सेकन्ड तक 20 मेगावाट नाभिकीय संयोजन विधि से उत्पन्न

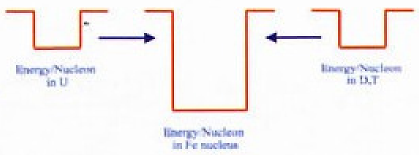

Figure 3. Energetics in nuclear fission and fusion reactions

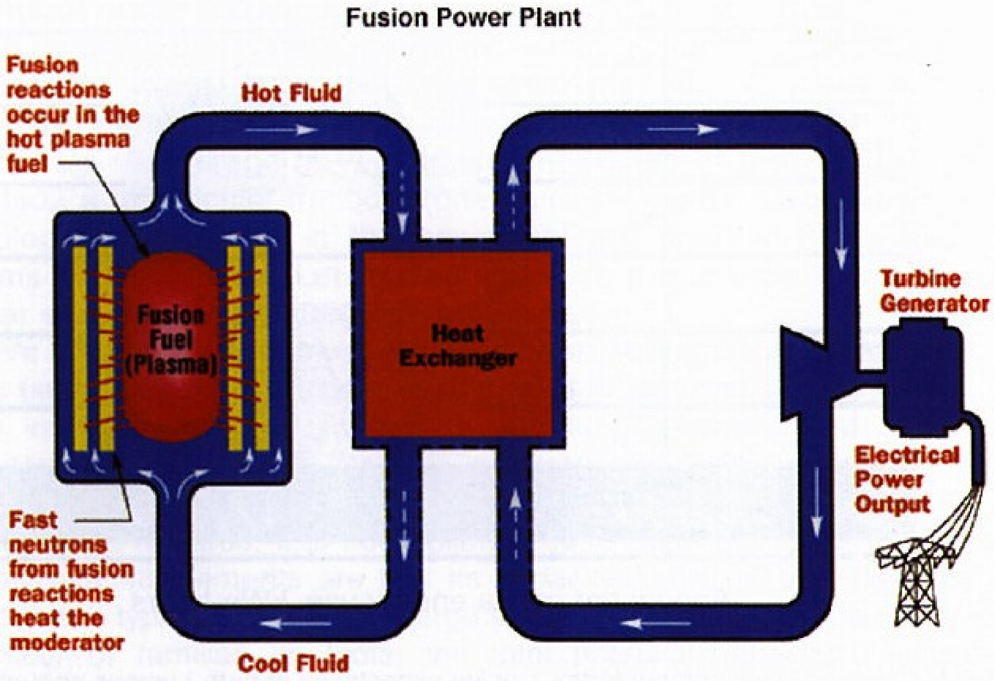

Figure 4a. Components of a fusion reactor

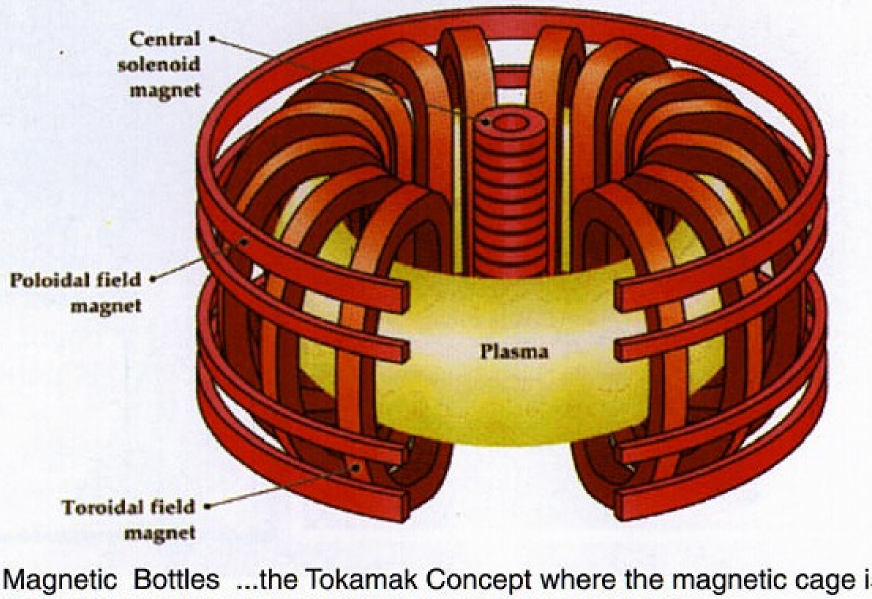

Figure 4b. Magnetic Bottles ...the Tokamak Concept where the magnetic cage is produced by a combination of plasma currents and external coil currents

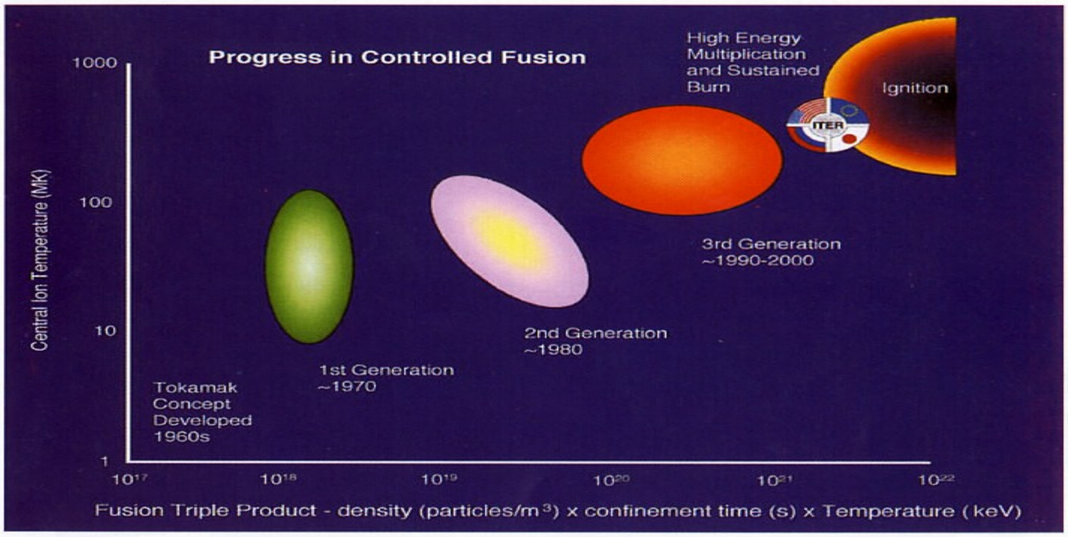

Figure 5. Progress in the critical parameters for fusion reactor experiments

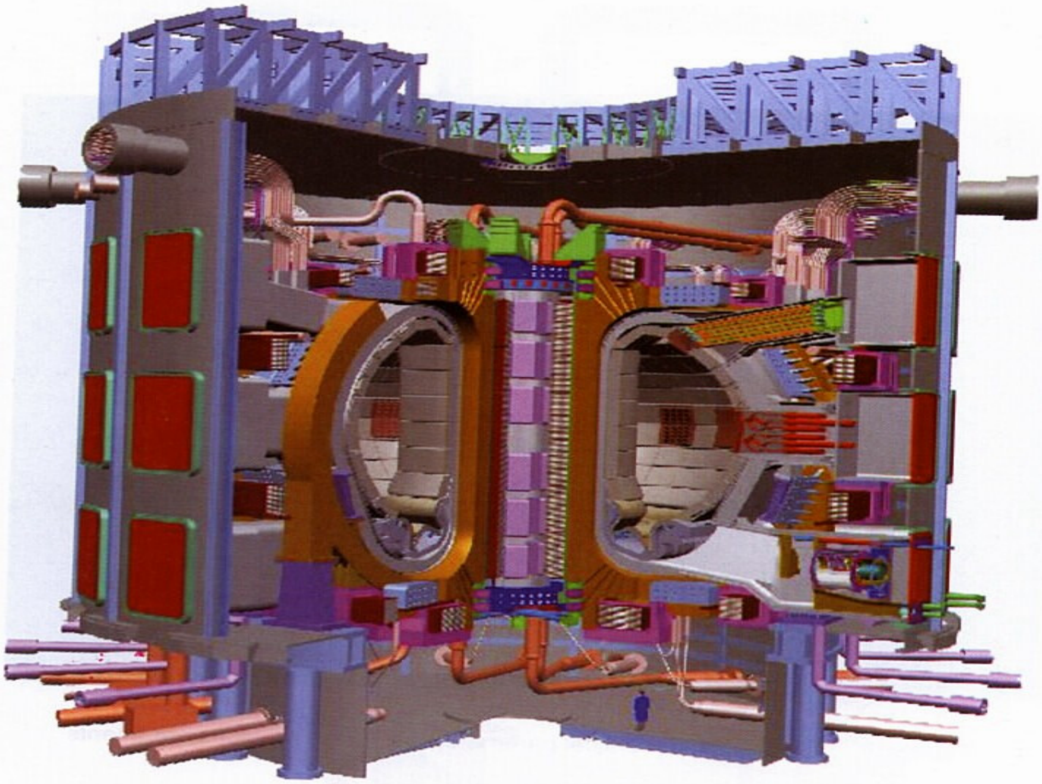

Figure 6. ITER, the International Thermonuclear Experimental Reactor

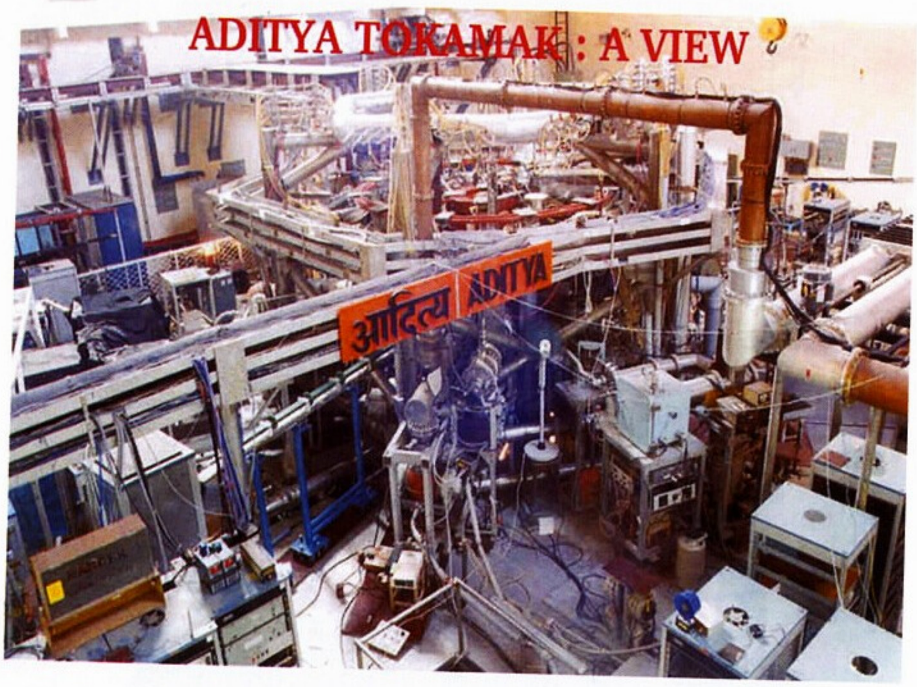

Figure 7. ADITYA , the indigenously built tokamak at Institute for Plasma Research , Gandhinagar

किया जा चुका है। अब इस दिशा में अगला कदम यह होगा कि प्लाज़्मा को कई घंटो तक स्थाई अवस्था में रखा जाए ताकि संयोजन की अग्नि एक बार प्रज्वलित होने पर ईंधन डालते रहने पर निरंतर प्रज्वलित रह ऊर्जा उत्पन्न करती रहे। यह अगली पीढ़ी के प्रयोगों का लक्ष्य है।

इसमें सबसे बड़ा प्रयोग एक अंतर्राष्ट्रीय परियोजना के तहत ITER चित्र-(6)(अंतर्राष्ट्रीय ताप-नाभिकीय प्रायोगिक रिएक्टर) नाम से किया जाना है। इस मशीन में प्लाज़्मा का आकार किसी औद्योगिक रिएक्टर के बराबर होगा। इसके निर्माण में 5 बिलियन डालर (25000 करोड रुपये) की लागत आएगी। इसमें सं.रा.अ., चीन, यूरोप, रुस, जापान, कनाडा, जैसे सदस्य देशों की भागीदारी होगी । सभी सदस्य देशों को लगभग पूरी लागत का न्यूनतम 10 प्रतिशत अवश्य देना होगा। इसके अलावा सभी सदस्य देश लगभग इतना ही खर्च अपने राष्ट्रीय योजनाओं में करेंगे ताकि नवीनतम विकसित तकनीकी से अवगत रहा जा सके। ITER का इंजीनियरिंग डिजाईन पूरा हो चुका है और इसका निर्माण कार्य सन 2006 में शुरु होने की संभावना है। प्रयोगों के महत्वपूर्ण परिणाम सन 2015 तक आने लगेंगे। ज़्यादातर लोगों का यह मानना है कि संयोजन रिएक्टरों का औद्योगिकरण वर्ष 2035 तक या फिर ज्यादा से ज्यादा वर्ष 2050 तक हो जाएगा।**

** इस अनुवादित लेख के प्रकाशन के समय तक ITER परियोजना के स्वरूप में महत्वपूर्ण बदलाव आएं हैं। आज भारतवर्ष भी इस परियोजना का बराबरी का भागीदार है। इस मशीन को फ्राँस के कैडैराश (Cadarache) शहर में बनाने का भी महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया जा चुका है।

नाभिकीय संयोजन संबंधित हमारी राष्ट्रीय योजनाएं 80 (अस्सी) के दशक में गाँधीनगर में प्लाज़्मा अनुसंधान संस्थान की स्थापना से शुरू हुईं। हमने भारतवर्ष में ही टोकामाक *आदित्य* का निर्माण किया जो कि 1989 में कमीशन किया गया तथा जिसपर अब निरंतर प्रयोग किये जा रहे हैं (चित्र-7)। आदित्य सूर्य का एक छोटा कृत्रिम प्रारूप है। इसमें प्लाज़्मा को चुम्बकीय क्षेत्रों की मदद से सेकण्ड के कुछ भाग तक नियंत्रित रखा जा चुका है तथा इसमे कई मिलियन अंश तापमान प्राप्त कर लिया गया है। अब हम अपनी दूसरी पीढ़ी के प्रयोग के लिए एस. एस. टी-1 मशीन (Steady State Superconducting Tokamak) का निर्माण कर रहें हैं। इसकी मुख्य विशेषता संयोजन अग्नि को 1000 सेकण्ड तक प्रज्वलित रख पाने की होगी (चित्र-8)। यह मशीन लगभग एक वर्ष में कमीशन हो सकेगा। इतने लम्बे समय तक प्लाज़्मा को नियंत्रित रख पाने का यह अपनी तरह का पहला प्रयोग होगा। अतः इस प्रयोग से ITER के लिए महत्वपूर्ण जानकारी हासिल होगी। चूँकि ITER में सहभागी बनने के लिए हमें अपने वर्तमान स्रोतों से दस गुना अधिक कीमत देना होगा, इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि इस दिशा में अंर्तराष्ट्रीय प्रगति पर हम अपने राष्ट्रीय योजनाओं का कुशलतापूर्वक सम्पादन कर नज़र रख सकते हैं।

आइए अब अपने निष्कर्ष संकलित करते हैं जो कि ऊर्जा के नए स्रोतों की खोज में अग्नि के पीछे चलते हुए हमने पाया। इस परिपेक्ष्य में हम कुछ नये विचारों को रखेंगे, जो भविष्य में विकल्पों के आधार बन सकते हैं। हम अग्नि तथा स्वयं के स्वरूप पर गहन चिन्तन भी करेंगे। हमने देखा कि जैविक बाहुबल शक्ति हमारी आवश्यकताओं की पूर्ती के लिए अपर्याप्त है। जीवाश्मीय ईंधन महज 100 वर्षों तक ही हमारा साथ निभा सकता है।भविष्य के लिए नाभिकीय ऊर्जा, विशेषकर संयोजन विधि द्वारा उन्मुक्त ऊर्जा ही सबसे महत्वपूर्ण आधार सिद्ध होगा। ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोत जैसे हाइड्रो, पवन, सौर भी होंगे परन्तु उनकी भूमिका गौण होगी।

सौर ऊर्जा के समुन्नत उपयोग के नये तरीके ढूँढ पाना शोध का एक बेहद महत्वपूर्ण विषय है। यह माना जा रहा है कि आनुवंशिक इंजीनियरिंग के आधुनिक तरीकों से त्वरित प्रकाश संश्लेषण/ विघटन किया जा सकेगा। आज एल्गी तथा बैक्टीरिया की ऐसी जातियों को विकसित करने की दिशा में काम हो रहा है जो सूर्य के प्रकाश तथा पानी का उपयोग कर हाइड्रोजन बना सकता हो। हाइड्रोजन एक बेहद अच्छा ईंधन है जोकि आसानी से पाइपों द्वारा वितरित किया जा सकता है। यह पूर्णतः प्रदूषणरहित है क्योंकि इसके दहन से पानी बनाता है। सौर ऊर्जा का एक अन्य आकर्षक उपयोग सौर सेटेलाइट परिकल्पना (चित्र-9) में है। इसके अनुसार सौर शक्ति स्टेशनो (solar power station) को पृथ्वी की स्थायी (stationary) कक्षा में स्थापित किया जाएगा। इससे यह शक्ति स्टेशन हमेशा सूरज को देख पायेंगे (दिन तथा रात से जुड़ी कोई असुविधा नहीं होगी) एवं न ही ये स्टेशन पृथ्वी पर कोई स्थान घेर कर रखेंगे। यह धूल, वातावरण तथा बादलों से प्रभावित नही होगा तथा पृथ्वी पर ऊर्जा को microwave सूक्ष्म किरणों द्वारा प्रेषित करेगा। यह परिकल्पना पहले चर्चित सौर ऊर्जा के उपयोग की अनेक खामियों को दूर करता है। इसकी विस्तृत रूपरेखा एवं इसके विभिन्न भागों को विकसित करने का कार्य प्रगति पर है। फ्रीमैन डायसन जैसे कुछ स्वप्नदृष्टा भी हैं जिन्होने यह प्रश्न किया कि आखिर हम क्यों सौर ऊर्जा के पृथ्वी पर पड़ने वाले महज 1/10 करोड़ हिस्से से संतोष करें? डायसन की इच्छा सम्पूर्ण सौर ऊर्जा को बड़े पैमाने पर मानव इंजीनियरींग कौशल्य द्वारा संग्रहित करने की थी। इसके लिए उन्होने शनि जैसे ग्रह को तोड़कर उसके पदार्थ द्वारा बृहस्पति (जुपिटर) के कक्ष के पास एक गोलाकार कक्ष बनाकर उसके भीतर सूर्य को सम्पूर्ण रूप से घेरने (चित्र-10) तथा इसकी अन्दरूनी सतह पर पड़ने वाले सौर ऊर्जा को उपकरणों द्वारा रुपांतरित कर पृथ्वी पर ऊर्जा के भूखे मनुष्यों को भेजने की परिकल्पना की। डायसन का मानना था कि तकनीकी तौर पर हमसे कहीं ज्यादा प्रगतिशील सभ्यता हो सकती है जो ग्रहों के स्तर (Engineering Project Planetary Scale) पर ऐसी तकनीकी अभियांत्रिक परियोजनाएँ चला रही हो।

अब हम ऊर्जा के स्रोतों की खोज़ के संदर्भ में अपना आखिरी प्रश्न करते हैं। हमने देखा कि ऊर्जा के अधिकांश स्रोत किसी न किसी रूप से अंततः नाभिकीय ईंधन के दहन से जुड़े हैं। यह दहन की प्रक्रिया या तो सूर्य के नाभिकीय अग्नि या फिर कभी किसी दिन पृथ्वी पर बने रिएक्टरों में से हो सकती है। हम यहाँ यह पूछ सकते हैं कि आखिर नाभिकीय ईंधन में संरक्षित ऊर्जा कहाँ से आई? इसके लिए हमें भारी तथा हलके तत्वों के नाभिकीय संश्लेषण (Nucleosynthesis of light and heavy elements) द्वारा निर्माण को समझना होगा।

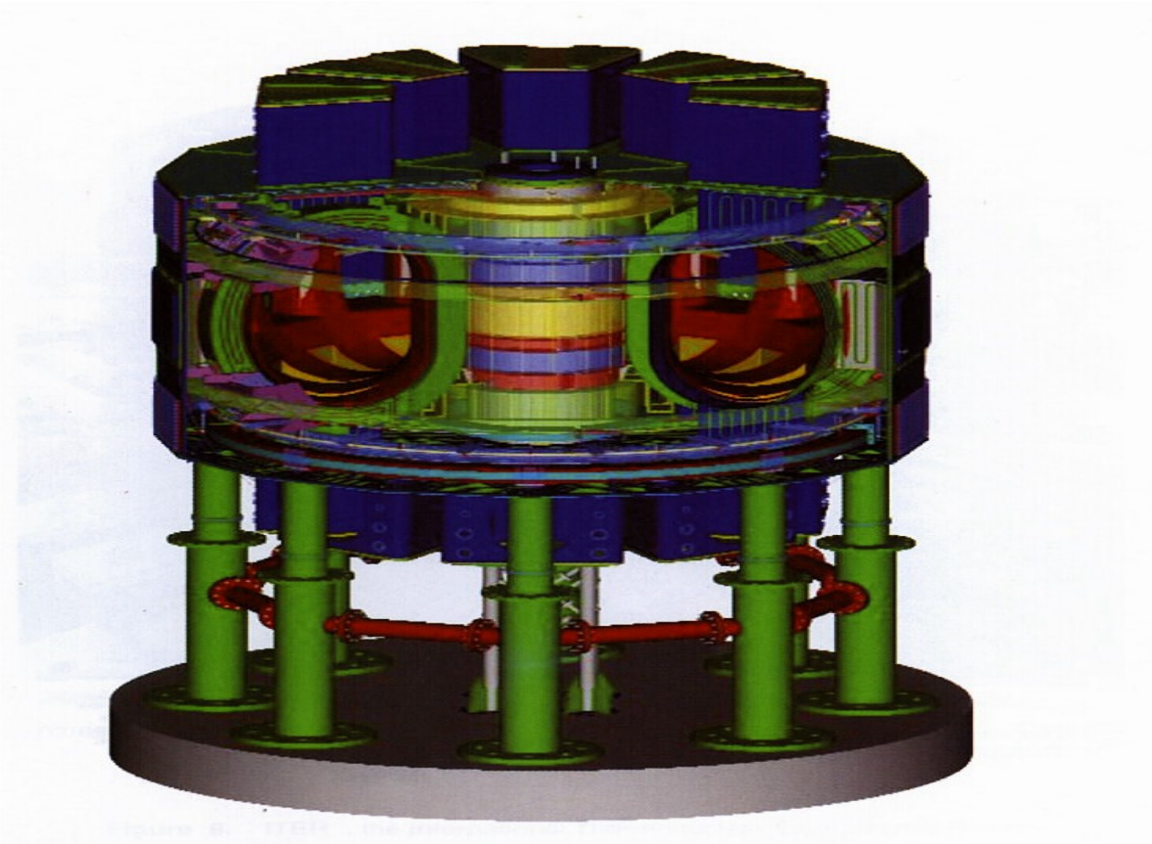

Figure 8. SST 1, the superconducting steady state tokamak , which will hold a fusion plasma for a 1000 seconds, being fabricated and assembled at Institute for Plasma Research , Gandhinagar

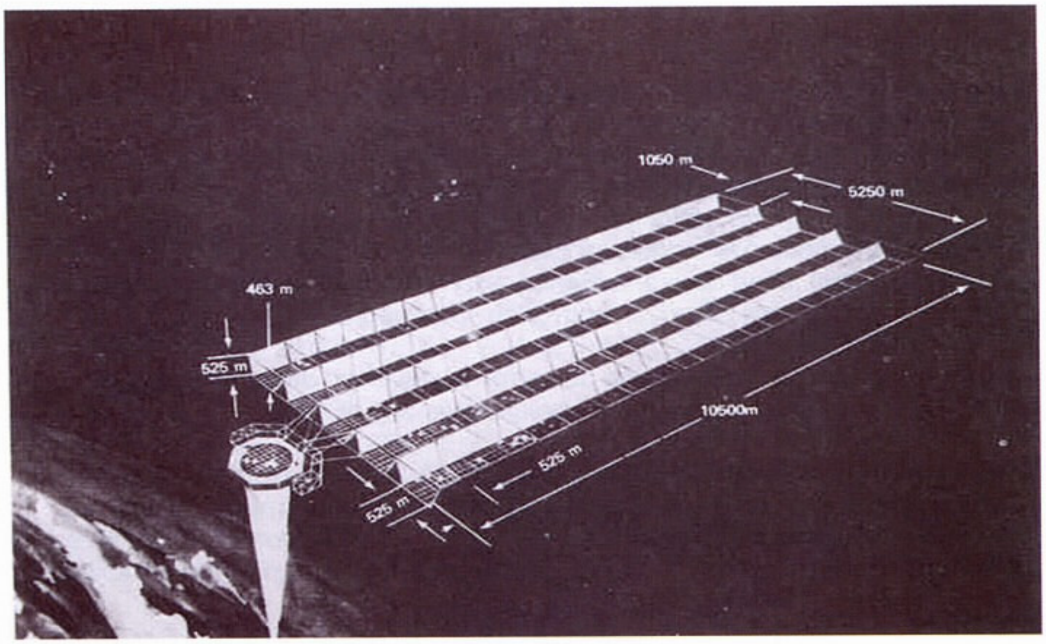

Figure 9. The Solar satellite concept

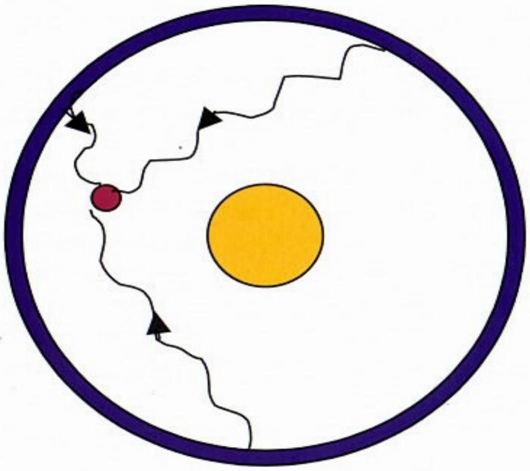

Figure 10. Our Sun surrounded by the Dyson sphere collecting all of sun's radiation and beaming the energy to earth .

ब्रह्माण्ड वैज्ञानिकों एवं खगोलशास्त्रियों ने इस प्रश्न का विस्तृत अध्ययन किया है। यह माना जाता है कि सबसे पहले एक बड़ा धमाका (BIG BANG) हुआ जिसने आदि-अग्नि को जन्म दिया। यह अग्नि शुरुआत में एक विकिरण के गोले के रूप में थी। जैसे जैसे यह फैलती रही यह ठंडी होती गई तथा इसने कई कणों जैसे Quark तथा Gluon (क्वार्क तथा ग्लूओन) को जन्म दिया। यही क्वार्क ग्लूओन प्लाज़्मा अवस्था कहलाई। जैसे जैसे यह गोला ठंडा होता गया क्वार्क द्वारा प्रोटॉन, न्यूट्रॉन तथा कई हलके तत्व जैसे हीलियम, लीथियम तथा बोरान इत्यादि बनते रहें। फिर शीघ्र ही गुरूत्वाकर्षण ने इन पदार्थों को जगह-जगह संघनित कर नाभिकीय संलयन भट्ठियों का निर्माण किया जिन्हें हम सितारे कहते हैं । कार्बन, आक्सीजन तथा नाइट्रोजन जैसे भारी तत्व इन युवा सितारों में बनें। लोहा जो कि सबसे स्थायी नाभिक है, इन सितारों का अंतिम उत्पाद रहा। लोहे के आगे के तत्व न्यूट्रॉन प्रग्रहण प्रक्रिया द्वारा बनते है। हमारे आस पास इतने विविध तत्व इसलिए मौजूद हैं क्योंकि

आदि ब्रह्माण्ड एवं सितारों में नाभिकीय संश्लेषन में तत्वों के बनने की प्रक्रिया अपूर्ण रही। अन्यथा हमें सभी जगह लोहा ही नज़र आता और नाभिकीय ईंधन (nuclear fuel) कहीं नहीं होता।

अंततः यह पूरी चर्चा हमें स्वयं के अस्तित्त्व पर चिन्तन करने को प्रेरित करती है । आखिर हम क्या हैं? अणुओं का एक उच्चस्तरीय आयोजित संग्रह? जिसके प्रत्येक परमाणु ... कार्बन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन इत्यादि अरबों वर्ष पुरातन हैं। निःसंदेह यह तथ्य अत्यन्त रोमांचक है कि मेरे शरीर का प्रत्येक हाइड्रोजन परमाणु 14-15 अरब वर्ष पूर्व आदि-अग्नि में क्वार्क द्वारा निर्मित हुआ है। इतना ही नहीं मेरे शरीर के अन्य परमाणुओं जैसे कार्बन, नाइट्रोजन तथा ऑक्सीजन के नाभिकों के गठन की दास्तान भी अत्यंत रोचक है। यह सभी किसी सितारे की संलयन भट्ठी में अपूर्ण दहन से गठित हुए, जिसे उस सितारे ने अपने जीवन की अंतिम अवस्था में अंतरिक्ष में छोड़ा एवं जिसे उन गैसीय बादलों ने अवशोषित किया जिससे हमारे सूर्य एवं अन्य ग्रहों का निर्माण हुआ। यही है अग्नि के अलौकिक एवं सार्वभौमिक स्वरूप की एक झलक। फिर कोई आश्चर्य नहीं की हम अग्नि के प्रति अपनी श्रद्धापूर्ण अभिव्यक्ति इन श्ब्दों में करेंः. ...

है तू परम स्रोत
सृजित हुआ तुझसे मैं ,
है तू पालनकर्ता
तेरी ऊर्जा से परिपालित रहा मैं ,
और तेरी ही गोद में
चिरनिद्रा में हो जाऊँगा विलीन मैं।

आधुनिक वैज्ञानिक पृष्ठभूमि के बावजूद हमारी भावनाएं अग्नि की स्तुति करने वाले हमारे ऋग्वैदिक पूर्वजों से कहीं भी भिन्न नहीं है।